Date of Publication
04 Jan. 2020

Vidyawarta™

International Multilingual Research Journal

www. विद्यावार्ता .कॉम
YouTube Channel

Vidyawarta is peer reviewed research journal. The review committee & editorial board formed/appointed by Harshwardhan Publication scrutinizes the received research papers and articles. Then the recommended papers and articles are published. The editor or publisher doesn't claim that this is UGC CARE approved journal or recommended by any university. We publish this journal for creating awareness and aptitude regarding educational research and literary criticism.

The Views expressed in the published articles,Research Papers etc. are their writers own. This Journal dose not take any libility regarding appoval/disapproval by any university, institute, academic body and others. The agreement of the Editor, Editorial Board or Publicaton is not necessary.

If any judicial matter occurs, the jurisdiction is limited up to Beed (Maharashtra) court only.

Indexed

IMPACT 6.021 iijif FACTOR

Cosmos
IMPACT FACTOR
5.234

Govt. of India,
Trade Marks Registry
Regd. No. 2611690

http://www.printingarea.blogspot.com

26) समकालीन हिन्दी कविता में अभिव्यक्त कृषक चेतना ||104
डॉ. संतोष विजय येरावार, देगलूर

27) किसानी समाज हाशिए पर 'हलफनामे' के जरिए ||108
डॉ. गोविंद गुंडप्पा शिवशेट्टे, जि. लातूर

28) त्रिलोचन के काव्य में किसान चेतना की अभिव्यक्ति ||110
डॉ. शेखर घुंगरवार, नांदेड

29) रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में चित्रित किसान जीवन ||113
प्रा. लुटे मारोती भास्करराव, नांदेड

30) समकालीन कविता में व्यक्त कृषक जीवन की त्रासदी ||117
प्रा. सूर्यकांत रामचंद्र चव्हाण, लातूर

31) आधुनिक उपन्यासों में चित्रित किसान की दशा और दिशा
डॉ. शे. रजिया शहेनाज शे. अब्दुल्ला, बसमतनगर ||121

32) हिंदी उपन्यासों में कृषक चेतना
प्रा.डॉ. हाके एम. आर., जि. परभणी ||124

33) प्रेमचंद : कृषक जीवन कल और आज
डॉ. हणमंत पवार, किल्लारी ||126

34) डॉ. नीरजा माधव के "देनपा तिब्बत की डायरी" उपन्यास में व्यक्त कृषक चेतना ...
प्रा. सोनकाम्बले पद्मानंद पिराजीराव, नांदेड ||132

35) हिंदी की कविता में चित्रित कृषक जीवन
डॉ. अविनाश कासांडे, जि. बीड ||135

36) भारतीय किसान जिवन की त्रासदी (हिंदी उपन्यासों के परिप्रेक्ष में)
प्रा. भेंडेकर एन. एस., गंगाखेड ||137

37) पूस की रात कहानी के बहाने किसान विमर्श
डॉ बालाजी श्रीपती भुरे, जि. लातूर ||141

38) हिंदी काव्य और कृषक जीवन : एक अनुशीलन
प्रा. डॉ. संतोष सुभाषराव कुलकर्णी, लातूर ||144

www.vidyawarta.com/03 http://www.printingarea.blogspot.com

36

भारतीय किसान जिवन की त्रासदी
(हिंदी उपन्यासों के परिप्रेक्ष में)

प्रा. भेंडेकर एन.एस.
हिंदी विभाग,
कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय गंगाखेड

भारतीय अर्थव्यवस्था की रीड़ की हड्डी तथा प्रमुख आधार स्तंभ के रूप में किसान की ओर देखा जाता है। कल, आज और कल का विचार किया जाये तो किसान ही अर्थव्यवस्था के केंद्र में है। किंतु कल किसान की स्थिति क्या थी? उसका आज कैसा है? और उसका आनेवाला कल कैसा गुजरेगा ? यह बहुत ही महत्वपूर्ण है। क्योंकि अकेले महाराष्ट्र की बात की जाये तो विगत तीन–चार वर्षो में अनेक किसानों ने आत्महत्या कर ली है। ऐसी स्थिति क्यों बनी ? इसके लिये कौन जिम्मेदार है? इस पर गौर से और एक नये सीरे से विचार करना परमावश्यक है। किसान दिन–रात मेहनत करता है, बीज बुआई से लेकर फसल काँटने तक की उसकी जी तोड़ मेंहनत और अंत में फसल के मिलने वाले दाम, इन सभी पहलुओं पर विचार किया जाये तो उसके पल्ले पुरे वर्श का गुजारा हो इतना भी नहीं पड़ता। अत: विवश होकर उसे साहुकार, बँक आदि का दरवाजा खटखटाना पड़ता है और लिये गये कर्जे का ब्याज चुकाते चुकाते वह इतना परेशान हो जाता है कि, तंग आकर आत्महत्या जैसे रास्तों को अपनाने के लिये वह विवश है। ऐसी स्थितियों को लेकर किसी एक को दोष देना संगत नही; अपितु आवश्यकता है फसल के निश्चित मूल्य निर्धारण की, जिससे वह शाश्वत हो सके और अपना जिवन आसानी तथा खुशहाली पूर्वक व्यतित कर सके।

किसानों की इस प्रकार की अवस्था अकेले महाराष्ट्र मे ही है ऐसा नहीं अपितु कम–अधिक मात्रा में समग्र भारत में इस प्रकार की स्थिति देखने को मिलती है। देश का अन्नदाता ही अगर विपदा में हो तो अन्यों की स्थिति क्या होगी ? इस पर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाना आवश्यक है। वर्तमान स्थिति की बात की जाये तो आज प्याज ८० रू प्रति किलो के हिसाब से बिक रहा है। जिसके चलते सड़क से लेकर संसद तक हंगामा खडा हो गया है। सरकार को बाहर से प्याज आयात करना पड़ रहा है। एक ओर मंहगाई की मार है तो दूसरी ओर किसान की दीन–हीन अवस्था। फसल अच्छी आये तो उसका उचित मुआवजा नही और फसल न आये तो दो समय की रोटी का प्रश्न ऐसी दुहरी चक्की में किसान पिसता हुआ दिखाई देता है। जिस देश की अर्थव्यवस्था का मुलाधार ही किसान हो, उसकी ऐसी दीन–हीन दशा हो ? यह एक गंभीर तथा महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित हो जाता है। आवश्यकता हैकि एक शाश्वत आधार किसानों को मिले, जिससे वह सभी मौसमों का सामना करते हुये अपनी फसल का एक निश्चित मूल्य प्राप्त कर सके। इससे पूर्व ठेकेदारों, दलालों द्वारा की जाने वाली उसकी लूट से उसे छुटकारा दिलाना आवश्यक है। सरकार की ओर से ऐसे ठोस उपायों को अंमल में लाना आवश्यक है जिससे किसान अपनी आजिविका सुचारू रूप से चला सके।

आजादी से पूर्व तथा बाद की स्थितियों पर विचार किया जाये तो किसान जिवन आज तक बेहद संघर्षपूर्ण ही रहा है। आजादी के पुर्व तो जो किसान थे, वे अपनी ही खेती में मजदूरी करने पर विवश दिखाई देते है। जिसका सटिक उदाहरण प्रेमचंद कृत 'गोदान' का 'होरी' है। समय समय पर किसान को इस व्यवस्था ने संघर्ष करने पर विवश कर दिया है, ऐसा ही चित्र दिखाई देता है। जमींदारी, साहुकारी, प्रस्थापित व्यवस्था तले अनेक किसान अपनी जमींनें खो बैठें। दुसरी ओर भारतीय फसल यह अधिकतर प्राकृति पर निर्भर करती है। जिसके चलते कभी अकाल, तो कभी बाढ़ का सामना करते–करते किसान जीवन का ढांचा पुरी तरह चरमराता हुआ दिखाई देता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि, उसकी फसल का कोई निर्धारित मूल्य

ही नही है। अगर ऐसी ही स्थितियाँ बनी रहीं तो मुक्तिबोध द्वारा लिखित 'ब्रम्हराक्षस' कविता की पंक्तियां जो आम इन्सान के जीवन की त्रासदी को बयां करती है वे आज के किसान जीवन की वास्तविकता पर भी सटीक बैठती है—

''पीस गया वह भीतरी
औ बाहरी दो कठिन पाटों के बीच,
ऐसी ट्रेजड़ी है नीच!''[१]

एक समय था जब भारत को 'सोने की चिड़ियाँ' कहा जता था। इसके पिछे अनेक कारण थे। सभी अपनी अपनी दृष्टि से सुखी संपन्न थे। जो आपस में व्यवहार होते थे, उनमें आज की भाँती रूपयों—पैसों के स्थान पर वस्तु—विनिमय का प्रचलन था। जिसके चलते लगभग सभी लोग एक दूसरों पर आश्रीत थें। क्यों कि लुहार का काम सिर्फ लुहार ही करता, कुम्हार का काम सिर्फ कुम्हार ही करता या बढ़ई का काम सिर्फ बढ़ई ही करता था। तथा सभी लोगों को एक दुसरें की समय—समय पर सहायता लेनी ही पड़ती थी। जिसके चलते एक दुसरें का मान—सम्मान बना रहता था। परंतु समय के साथ इन स्थितियों में बदलाव आये और हर कोई अर्थ के पिछे भागने लगा। परिणामतः लोगों में स्वार्थी प्रवृत्ति का पनपना स्वाभाविक था। किसानों के घर अनाज के अंबारों के ढेर लग जाते थे और लोग समय—असमय एक दूसरों की मदत करने को तत्पर दिखाई देते थें। परंतु कल की यह स्थिति आज नही रहीं। आज आपसी व्यवहार में पहले जैसा लेन—देन नहीं हो पाता क्योंकि आज के सभी व्यवहारा लगभग पैसों से चलते हैं। इसके चलते अमिर और अधिक अमिर बनते चले गये और किसान और भी दीन बनता चला गया। क्योंकि इनकी आजिविका का एकमात्र सहारा खेती होने के कारण पुरे वर्ष मेंहनत कर फसल उगाना और उसी फसल से अपना जिवन चलाना यही इनका कार्य था। अन्य कोई साधन न होने कारण इनके पास धन संचय नाम—मात्र ही मिलता है।

जब जमिंदारी तथा साहुकारी प्रथा का आरंभ हुआ तभी से इनके जीवन का स्तर नीचे की ओर सरकने लगा ऐसा कहा जाये तो कोई अत्युक्ति न होगी। क्योंकि इन प्रथाओं ने किसानों की रीड की हड्डी को ही तोड़ दिया था। भारत में किसान जिवन दो पाटों के बीच इस प्रकार पिसा जा रहा था कि सामान्य किसान धिरे—धिरे किसान न रहकर मजदूर बनने पर विवश हुये दिखाई देते हैं। एक ओर अंग्रेजी पासन के अन्याय—अत्याचार के साथ टॅक्स वसुलना तथा दूसरी ओर साहुकारों, जमिंदारों द्वारा कर्जे, लगान के नाम पर किसानों को लुटना, इनसे किसान जिवन का ढाँचा पुरी तरह चरमरा गया था। खेतीवाले किसान भूमिहीन बन गये, तथा भूमिहीन मजदूर। यह एक ऐसा महत्वपूर्ण कारण है, जिसके चलते गाँव से पहरों की ओर लोगों का ताँता बंधा हुआ देखा जा सकता है। 'गोदान' का 'होरी' दुःख में जिया ओर दुःख में मरा। 'होरी' का बेटा 'गोवर' गाँव में जमिंदार, साहुकारों की चापलुसी करने के बजाय, शहर में जा कर सम्मान के साथ मेहनत—मजदूरी करता है। कारण, गाँव में कोई और काम न होना, जो बची हुयी खेती थी, उसमें परिवार का निबाह न होना ओर बाद में वह भी चली जाना। जिसके चलते गाँव से शहरों की ओर जाना यह आम हो गया था। गोदान का 'गोवर' इसी बात का प्रतिनिधित्व करता हुआ दिखाई देता है।[२]

आजादी के उपरांत की स्थितियों पर विचार किया जाये तो भारत में गाँवों की अपेक्षा शहरों पर ही शासनकर्ता, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री आदि का ध्यान रहा। परिणामता आज भी गाँव में आवश्यक सुविधाओं का अभाव दिखाई देता हैं। दूसरा यह कि आधुनकिता की चकाचौंध ने सभी को शहरों की ओर आकर्षित किया, परिणामतः गाँवों से शहरों की ओर रोजगार की तलाश तथा शहरों के आकर्षण ने एक प्रकार की बाढ़ सी आयी और शहरों के आकार दिनों—दिन बढ़ने लगे। इस प्रकार की स्थिति का सिधा असर हुआ भारतीय किसान जीवन पर। इसिके चलते परिवार विघटन की समस्या ने उसका बल आधा कर दिया, खेतों में काम करने वाले हाथ कम हो गये, यहाँ तक की मजदूरों का भी अभाव रहने लगा। अधिक रोजगार पाने की लालसा के चलते गाँव के युवा अपनी खेती में निबाह न होने के कारण अब शहरों की ओर चल दिये। परिणामतः गाँव में खेती करने के लिये मनुष्य

बल कम पड़ने लगा। ऐसे कई कारण गिनाये जा सकते हैं जिसके चलते परिवार के परंपरागत मूल्यों में विघटन की प्रकिया आरंभ हुई। 'विवेकी राय' कृत 'मंगल भवन' में इसी प्रकार की मजदूरों की समस्या को 'मास्टर विकम' के द्वारा अभिव्यक्त किया गया है, ''आषाढ़ के चलते सारे गाँव में अफरा–तफरी मचीहै। एक आदमी तक खोजने पर काम के लिए नहीं मिल रहा है। इधर ढेर सारे काम पड़े है. बीस–पचीस रूपये नकद और भोजन देने पर भी कोई मजदूर नहीं मिल रहा है ?''[३]

ग्रामीण जीवन यह पहले से ही अनेक विवंचनाओं से ग्रस्त रहा है। जमींदार, साहुकार आदि जैसे लोगों को छोड़ दिया जाये तो गाँव में जीवन व्यतित करने वाले किसी न किसी समस्या से जुझते हुये दिखाई देते हैं। किसान जीवन यह तो पुरी तरह खेती पर निर्भर तथा खेती प्रकृति पर। अत: कभी, सुखा तो कभी अकाल तो कभी बे–मौसम बरसात उसकी फसल को तहस–नहस कर देती। परिणामत: किसान को अपनी उपजीविका चलाने हेतु, बीज बुआई के लिये, मकान की मरंम्मत के लिये या अपनी बेटी की शादी के लिये किसी साहुकार या जमींदार के द्वार खटखटाने पर विवश होना पड़ता। इनके द्वारा लिये गये कर्जे का बोज इतना भयावह था कि, कर्जे का सूद चुकाते चुकाते एक पिढ़ि द्वारा लिया गया कर्जा उसकी दूसरी पिढ़ि के मत्थे आता लेकिन मूल टस से मस नही हो पाता। ऐसी ही स्थितियों की अभिव्यक्ति 'जगदिश चंद्र' द्वारा लिखित 'धरती धन न अपना' में कुछ इस प्रकार हुयी है– ''तुम्हारे चाचा सिद्धू ने बारह साल पहले मकान बनाने के लिए मुझसे एक सौ रूपये उधार लिये थे। उससे ब्याज लेना तो मैंने मुनासिब नहीं समझाा था क्योंकि वह अपना प्रेमी था। उसने असल रक्कम में पच्चत्तर रूपये ही वापस किये थे और अभी पच्चीस रूपये बाकी थे कि उसे मौत ने आ घेरा। बेचारा बहुत इमानदार आदमी था।''[४]

प्राकृतिक आपदा के चलते किसानों के जीवन में अनेक प्रकार मुश्किलें उत्पन्न होती है। जो किसान अपनी जी–जान एक कर फसल का निर्माण करता है और उसे यह आशा निर्माण होती है कि अब की बार यह फसल अगर हाथ में पड़ जाये तो पिछले दो वर्षों की बराबरी हो जाये। किंतु प्रकृति पर किसी का बस नहीं चलता कभी अकाल तो कभी सुखा जिस से हाथ में आयी हुयी फसल चली जाती है। ऐसी ही स्थितियों की अभिव्यक्ति 'धरती धन न अपना' में कुछ इस प्रकर हुयी है– ''आषाढ़ के बाद सावन आया और खतों में हरियाली घनी होने लगी। मक्की की फसल कमर तक उठ आयी। सावन के सात दिन निकल चुके थे लेकिन एक बार भी वर्षा नहीं हुई थी। सारा दिन कड़ाके की धूप पड़ती। चमादड़ी के साथ रूका हुआ पानी सड़ने लगा था और उस पर मच्छरों के दल के दल पैदा हो गये थें।''[५]

स्वतंत्रता पूर्व काल में पनपीं जमींदारी व्यवस्था के परिणाम हमें आज भी देखने को मिलते हैं। उस समय जीन सामान्य जनों की जमीनें जमींदारों के पास चली गयीं वे कभी वापस नहीं आयीं। परिणामत: अल्पसंख्यकों के पास जो थोड़ी बहुत जमींन के टुकडे थे वें लिये गये कर्ज का ब्याज चुकाते–चुकाते अपनी जमींनें भी जमींदारों के हत्थे चढ़ गयीं और जो भूमिहर थे वे भूमिहीन बन गये। इसी प्रकार की अभिव्यक्ति करते हुये 'मिथिलेश्वर' अपने 'यह अंत नहीं' में कहते है, ''चुनिया का पिता नरोत्तम कहार गाँव के अल्पसंख्यकों में से था। कहार–टोली के सात–आठ घर कहारों में से एक। उन कहारों के जिम्मे खेती के लिए अपनी कोई जमीन नहीं तथा नाई, धोबी, बढ़ई, कुम्हार आदि जातियों की भाँति अपना कोई जातिगत व्यवसाय भी नहीं। अपनी आजीविका चलाने के लिये उन्हें जोतदारों के यहाँ बनिहार–चरवाह बनना पड़ता।''[६]

आज हम इक्कीसवीं सदी में जी रहें है। अन्य राष्ट्रों की तुलना में हमने कितनी तरक्की कर ली ? क्या आज हम ऊँचे तबके से लेकर निचले तबके तक सभी को सुख–सुविधाएँ पहुँचा पाये है ? क्या सभी गाँव पक्की सड़कों से एक–दूसरों से जोड़े गये है ? आदि कई ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्न हैं जिनके उत्तर हमें खोजनें की आवश्यकता है। सन २००० तक बहुत से गाँव ऐसे मिलेंगे जहाँ पर एक गाँव को दुसरे गाँव से या शहर से पक्की सड़क से नहीं जोड़ा गया। ऐसे में खेती में कार्य करनेवाले किसान परिवार की स्थिति

कैसी होगी? अगर कोई बीमार पड़ता है तो मरीज को लेकर वे अस्पताल कैसे पहुँच पायेंगे? आज भी किसान जीवन में कई ऐसी त्रासदियाँ है, जिनसे किसानों को आज तक छुटकारा नहीं मिल पाया है। इसी बात को अभिव्यक्त करते हुये 'मिथिलेश्वर' अपने 'यह अंत नहीं' में एक स्थान पर कहते है, ''यह सड़क कई गाँवों से होते हुए शहर को जाती थी। लेकिन उसके गाँव से कस्बे के बस पड़ाव तक एकदम कच्ची, धूल भरी और उभड़–खाभड़ थी। कहीं गड्ढे की तरह गहरी हो गई थी, तो कहीं पर्वत की तरह ऊँची, तो कहीं साँप की तरह टेढ़ी। सड़क की माफिक समतल तो कहीं थी ही नही।गाँव में इस बात की चर्चा है कि सरकारी कागज पर यह सड़क तो पक्की घोषित हो गई है, अब यह सड़क पक्की न बन सकी तो इसका दुर्भाग्य.!''७

भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी तथा धोखा–धड़ी ये ऐसे पहलु है जो समाज जीवन को विकलांग बना देते है। कुछ स्वार्थी प्रवृत्तियाँ निढ़ल्ले से ऐसा कार्य करती हुयी दिखाई देती है। वर्तमान स्थितियों को ही देखा जाये तो विभिन्न योजनायें सरकार की ओर से चलाई जाती हैं किंतु सामान्य जनों तक उसका लाभ कितनी मात्रा में मिलता है ? हमारे यहाँ गबन करने वालों की कमीं नहीं। बिना किसी ड़र के ऐसे लोग कम समय में अमीर बनने के लिये ऐसे कार्य करते हुये दिखाई देते हैं। शासन की ओर से भूमिहीन किसानों को जमीनें प्रदान की गयीं, लेकिन वें जमीनें किसानों तक पहुँच ने से पहले ही कोई ओर हड़प लेता है। इसी प्रकार की स्थिति को चित्रित करते हुये 'जगदिश चंद्र' जी अपने 'जमींन तो अपनी थी' में 'काली' के द्वारा प्रकट करते है, ''साहबजी, आप बहुत बड़े लीड़र हैं। हमारी सहायता कीजिए। सरकार ने हमें जमीन दी किन्तु कुलतारसिंह ने धोखाधड़ी करके अपने नाम करवा ली।''८

सारतः भारतीय किसान जीवन की त्रासदी के संदर्भ में हम यह कह सकते है कि आज भी किसानों का जीवन यह संघर्षमयी तथा यातनाप्रद है। उसे अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। चाहे वह फिर सरकारी योजनाओं का लाभ उठाना हो या अपनी फसल का सही मुआवजा प्राप्त करना हो। जब तक किसानों को आवश्यक सुविधाएँ जैसे– सिंचाई, सिंचाई के साधन, बीजली, बीज, कृषि उपयोगी तंत्रज्ञान आदि किसानों तक नहीं पहुँचता तब तक देश में किसानों की त्रासदियाँ कम नहीं होगी और जिस देश में किसान ही संपन्न न हो उस देश में अनाज की महंगाई जैसे प्रश्न उपस्थित होते रहेंगे ऐसा कहा जाये तो कोई अत्युक्ति न होगी।

संक्षेप में हिंदी उपन्यासों में किसान जीवन की दशा–दिशा, किसानों का शोषण, व्यवस्थागत त्रासदियाँ और इस तरह की विभिन्न समस्याओं से ग्रस्त जीवन यापन की समस्या को हिंदी उपन्यासों में यथार्थता के साथ चित्रित किया हुआ दिखाई देता है।

संदर्भ सूचिः

१ Kavitakosh.kk./org/चांद का मुँह टेढ़ा है/ ब्रम्हराक्षस– मुक्तिबोध सं. २००४
२ गोदान– प्रेमचंद
३ विवेकी राय के साहित्य में ग्रामांचलिक जन–जीवन का चित्रण– डॉ.दिलीप भरगें, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर २००६ पृष्ठ १४७
४ धरती धन न अपना– जगदिश चंद्र. राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली, तृतिय सं २००७ पृष्ठ. ३९
५ वहीं पृष्ठ.२१०
६ यह अंत नहीं– मिथिलेश्वर, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं २००० पृष्ठ ०८
७ वहीं पृष्ठ ४५–४६
८ जमीन तो अपनी थी– जगदिश चंद्र. राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली. सं २००१ पृष्ठ. १९३

❑❑❑